उत्तराखंड उच्च न्यायालय, नैनीताल

आपराधिक विविध आवेदन संख्या 2471 2019 (धारा 482 सी0आर0पी0सी0 के अंतर्गत)

पवन कुमार बडोनी ... आवेदक

बनाम

उत्तराखंड राज्य और अन्य ... प्रत्यर्थीगण

अधिवक्ता: आवेदक की ओर से श्री राज कुमार सिंह, अधिवक्ता।

राज्य के लिए प्रतिवादी की ओर से

सुभाष त्यागी, डिप्टी एडवोकेट जनरल के साथ

श्री बलविंदर सिंह थिंद ब्रीफ हॉल्डर, श्री पीयूष गर्ग, एडवोकेट।

<u>न्यायमूर्ति माननीय शरद कुमार शर्मा.</u>

यद्यपि यह विचार में शामिल नहीं है, आवेदक के अधिवक्ता ने मुक़दमा अपराध संख्या 103/2016, राज्य बनाम पवन कुमार बडोनी की कार्यवाही को चुनौती दी गयी थी, जिसके अंतर्गत धारा 420, 406, 504 और 506 के अंतर्गत अपराध में उनकी कथित संलिप्तता के लिए उनके खिलाफ मुकदमा चलाया जा रहा है, एफ0आई0आर0 नं0 103 ,जो उनके विरूद्ध 14 सितंबर 2016, पुलिस स्टेशन वसंत विहार, जिला देहरादून में दर्ज किया गया , जिस पर विवेचना की गई थी और 4 फरवरी 2017 को आरोपपत्र नंबर- 13 के रूप में विवेचना अधिकारी द्वारा एक आरोपपत्र प्रेषित किया गया, जिस पर विद्वान न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वितीय देहरादून, द्वारा दिनांक 21 मार्च 2017 के एक आदेश द्वारा संज्ञान लिया गया

2. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता द्वारा एक बहुत ही विरल तर्क उठाया गया । प्रारंभ में, उन्होंने यह तर्क देने का प्रयास किया था कि आपराधिक कार्यवाही शुरू करना विधि की दृष्टि से उचित नहीं है, क्योंकि पहले से ही एक 138 की कार्यवाही लंबित थी।

3. बाद में, जब बहस आगे बढ़ी, तो यह तर्क दिया गया कि कार्यवाही को संस्थित करना स्वयं उन तर्कों को झुठलाती है जो आवेदक के विद्वान अधिवक्ता द्वारा अभिकथित की गई थीं। चूंकि एफ0आई0आर0, जिस पर संज्ञान लिया गया है, जिसके परिणामस्वरूप 2016 का आपराधिक मामला संख्या 103 दर्ज किया गया है, 14 सितंबर 2016 को पहले स्थापित एफ0आई0आर0 का परिणाम है, और मामले की परिवाद का पंजीकरण बहुत बाद में अर्थात 17 अक्टूबर 2016 को किया गया , जिसके अंतर्गत दो परिवाद परिवाद संख्या 4204/ 2016 व परिवाद संख्या 4205 /2016 के अंतर्गत प्रतिवादी द्वारा संस्थित किए गए थे। इसलिए परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138, आवेदक के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आरम्भ में विस्तारित करने का प्रयास दिए गए तर्क को विफल कर दिया जाता है, क्योंकि एफ0आई0आर0 के बाद परिवाद कार्यवाही की संस्थित किये जाने पर, इसका उस पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा।

4. एक अन्य कारण यह है कि परिवाद कार्यवाही में जिस कार्य परिवाद की गई है, वह परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के दायरे में आती है, जो चेक बाउंस होने की स्थिति में एक विशेष अधिनियम के अंतर्गत कार्यवाही करने तक सीमित होगी। चूंकि चेक बाउंस की कार्यवाही अपने आप में किसी अपराध को करने के दुर्भावनापूर्ण इरादे से किए गए कार्य के लिए आवेदन का परीक्षण आवश्यक नहीं होगा, जिसके लिए पहले ही एफ0आई0आर0 14 सितंबर 2016 को दर्ज की जा चुकी थी ।

5. आवेदक के अधिवक्ता का तर्क है कि परिवाद कार्यवाही और आपराधिक पक्ष की कार्यवाही की विषय वस्तु समान है, इसलिए, आपराधिक मामले को आगे नहीं बढ़ाया जा सकता है।

6. यह तर्क इस न्यायालय द्वारा स्वीकार्य नहीं है, इसका कारण यह है कि एन0आई0 अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत कार्यवाही, जो स्पष्ट रूप से समय के बाद हो रही है, एक अलग विधायी आशय के साथ है, जिसे परक्राम्य लिखत अधिनियम के एस0ओ0आर0 (उद्देश्यों और कारणों के कथन) के अनुसार पूरा किया जाना है, जो सामान्य आपराधिक/ दाण्डिक कार्यवाही के प्रावधानों के लिए अपने आवेदन में पूरी तरह से स्वतंत्र है, भारतीय दंड संहिता के प्रावधानों के अंतर्गत प्रदान किया गया।

7. भारतीय दंड संहिता के प्रावधानों के अंतर्गत कार्यवाही अपने आप में धारा 138 के अंतर्गत कार्यवाही को धूमिल नहीं करेगी, हो सकता है यह तथ्यात्मक रूप से वित्तीय सहायता के विस्तार, विरोधी पक्ष को धोखा देने के संबंध में उसी तथ्यात्मक विवाद पर विचार कर रही हो, जिसका परिवाद आपराधिक मामले में किया गया है।

8. प्रदान की गई कपटपूर्ण वित्तीय सहायता चेक के अनादरण से बिल्कुल अलग मामला है, क्योंकि यह तथ्य कि चेक जारी किया गया था, बाद में की गई कार्यवाही के आधार पर आपराधिक कार्यवाही में लगाए गए आरोप की स्वीकृति होगी।

9. आवेदक के अधिवक्ता ने सी0आर0पी0सी0 की धारा 300 के अंतर्गत निहित प्रावधानों का हवाला देते हुए कहा है कि सी0आर0पी०सी0 की धारा 300 के अंतर्गत निहित प्रावधानों के आलोक में बाद की कार्यवाही पर रोक लगाई जाए।

10. तर्कों को स्वीकार नहीं करने के दो कारण हैं, जिन्हें आवेदकों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा बताया गया था। **एक** इस न्यायालय की राय के अनुसार सीआरपीसी की धारा 300 की रोक केवल तभी लागू होगी जब पूर्व दोषसिद्धि या दोषमुक्त हो; यहाँ इस प्रकार का कोई मामला नहीं है । **दूसरा** कार्यवाही में भाग लेने वाले पक्ष प्रमुख शीर्ष को छोड़कर विधि के किसी प्रावधान का विच्छेदन करने और उसे अपनी सुविधा के अनुसार पढ़ने की स्वतंत्रता नहीं ले सकते हैं, जिसके लिए विधायिका को विधि के प्रावधान तैयार करने की आवश्यकता होती है।

11. सी0आर0पी0सी0 की धारा 300 के अनुसार बाद की कार्यवाही शुरू करने पर रोक केवल उस स्थिति में होती है जब दोषसिद्धि या दोषमुक्त किया जाता है, जो तथ्यात्मक रूप से किसी भी परिस्थिति में यानी आपराधिक विधि के अंतर्गत या परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत कार्यवाही के अंतर्गत मामला नहीं है और इसलिए सी0आर0पी0सी0 की धारा 300 इस मामले के तथ्यों के अंतर्गत लागू नहीं होगी। आवेदक के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आकर्षित होने का प्रयास किया।

12. आवेदक के विद्वान अधिवक्ता ने एक फैसले का संदर्भ दिया जैसा कि निम्नवत अभिकथित गया है **2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 1010**, ***वेधासिंह बनाम आर. एम. गोविंदन और अन्य,*** जहां माननीय उच्चतम न्यायालय ने सी0आर0पी0सी0 की धारा 300 (1) के निहितार्थ के परिणामस्वरूप दोहरे खतरे के प्रभाव का उल्लेख किया है।

13. उक्त मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दोहरे दण्ड के सिद्धांत को, आदेश का पूरा सम्मान करते हुए, केवल तभी लागू किया जाएगा जब किसी निष्कर्षित आपराधिक कार्यवाही द्वारा पूर्व निर्णय या दायित्व का निर्धारण किया गया हो, और उस स्तर पर आकर्षित नहीं किया जाएगा जब कार्यवाही अभी भी लंबित है और वह भी एक अलग अधिनियम के अंतर्गत , जिसका एक अलग आशय है। इसलिए, आवेदक के विद्वान अधिवक्ता द्वारा भरोसा किया गया निर्णय और विशेष रूप से, जहाँ वह उक्त निर्णय के पैरा 13 को संदर्भित करता है, यहां, पूरी तरह से एक अलग संदर्भ में है, जिसमें यह देखा गया था कि जहां आरोप समान हैं और वह भी परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत अपराधों के अभियोजन के लिए,

आईपीसी की धारा 406 और 420 के साथ-साथ, जो प्रकृति में एक समान हैं. इस न्यायालय का विचार है, भले ही सी0आर0पी0सी0 की धारा 300 (1) को आकर्षित करने के लिए उस टिप्पणी को दूरस्थ रूप से स्वीकार किया जाए, क्योंकि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने सी0आर0पी0सी0 की धारा 300 (1) के प्रमुख का क्या प्रभाव होगा, इस बारे में कोई टिप्पणी या निर्धारित नहीं किया है। जहां यह संदर्भित करता है "**दोषसिद्धि या दोषमुक्ति** " जहां तक वर्तमान आवेदक का प्रश्न है, इस फैसले से 2016 के आपराधिक मामले संख्या 103 की कार्यवाही पर रोक लगाने का कोई फायदा नहीं होगा, परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत परिवाद की कार्यवाही से पहले संस्थित किया गया था। उक्त निर्णय की पैरा 13 निम्नानुसार है:-

14. संगीताबेन के निर्णय के अवलोकन पर महेंद्रभाई पटेल (सुप्रा) ने अपीलकर्ता द्वारा मेसर्स वीएस रेड्डी एंड संस (सुप्रा) के मामले में भरोसा किया और जी सागर सूरी (सुप्रा) और कोल्ला वीरा राघव राव (सुप्रा) के मामले में प्रतिवादियों द्वारा जिन फैसलों पर भरोसा किया गया, तथ्य और आरोप समान थे और वह भी अपराधों के लिए अभियोजन पक्ष के अंतर्गत धारा 138 एन0आई0 अधिनियम के अंतर्गत और, धारा 406 और 420 आई0पी0सी0 की धाराएं भी इसी तरह की थीं। संगीताबेन महेंद्रभाई पटेल (सुप्रा) के फैसले में यह माना गया था कि विधि के अंतर्गत अपराध साबित करना आवश्यक है। एन0आई0 अधिनियम और आई0पी0सी0 के अंतर्गत अपराध अलग है, और यह देखा गया कि तथ्यों की कुछ परस्पर-व्यापक हो सकता है लेकिन अपराधों के तत्व पूरी तरह से अलग हैं, इसलिए, बाद के मामलों को किसी भी वैधानिक प्रावधानों द्वारा प्रतिबंधित नहीं किया जाता है। जबकि जी. सागर सूरी (सुप्रा) और कोल्ला वीरा राघव राव (सुप्रा) के मामले में, अदालत ने निष्कर्ष निकाला कि धारा 300 (1) सीआरपीसी किसी पर भी एक ही अपराध के लिए या यहां तक कि एक ही तथ्य पर एक अलग अपराध के लिए मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है और दोषी नहीं ठहराया जा सकता है, इसलिए, अभियोजन के अंतर्गत धारा 420 IPC किसके द्वारा प्रतिबंधित है? धारा 300(1) सीआरपीसी के अंतर्गत रद्द किया जा सकता है। यह देखा जाना चाहिए कि संगीताबेन महेंद्रभाई पटेल (सुप्रा) के मामले में जी. सागर सूरी (सुप्रा) और कोल्ला वीरा राघव राव (सुप्रा) के निर्णयों को संदर्भित किया गया है, लेकिन इस आधार पर अलग किया गया है कि इसे उठाया नहीं गया था और निर्णय लिया गया था कि तथ्य दोनों में अपराध एक जैसे नहीं थे और सीआरपीसी की धारा 300(1) अपवर्जित थी, आकर्षित नहीं करेगा। यहां यह ध्यान रखना प्रासंगिक है कि दोनों पक्षों द्वारा उद्धृत निर्णय दो न्यायाधीशों की संख्या वाली पीठों द्वारा प्रदान किए जाते हैं। हमारे विचार में, संगीताबेन महेंद्रभाई पटेल (सुप्रा) के मामले में इस न्यायालय की पीठ ने निम्नलिखित का अनुसरण किया: मेसर्स वीएस रेड्डी एंड संस (सुप्रा) ने जी. सागर सूरी (सुप्रा) और कोल्ला वीरा राघव राव (सुप्रा) के पिछले

फैसलों से अलग दृष्टिकोण अपनाया है। दोनों मामलों में लिया गया दृष्टिकोण एक-दूसरे के विरोधाभासी हैं। यह देखने की जरूरत है कि यह एक कठोर विधि है, अगर किसी मुद्दे पर पिछले फैसले में उतनी संख्या वाले न्यायाधीश की पीठ द्वारा फैसला किया जाता है, तो बाद के फैसले में विरोधाभासी दृष्टिकोण इस आधार पर प्रस्तुत नहीं किया जाना चाहिए कि इस मुद्दे को पिछले फैसले में नहीं उठाया गया है या विचार नहीं किया गया है। इस संबंध में निर्णय जिला प्रबंधक, एपीएसआरटीसी, विजयवाड़ा वी. के. शिवाजी, (2001) 2 एससीसी 135, चन्द्र प्रकाश वी, उत्तर प्रदेश राज्यएआईआर एससीडब्ल्यू 1573 को लाभप्रद रूप से संदर्भित किया जा सकता है जिसमें यह देखा गया है कि न्यायिक अवेक्षा है कि यदि समान संख्या वाले दो न्यायाधीशों की पीठ द्वारा पारित निर्णय परस्पर विरोधी हैं, तो इसमें शामिल विधि के मुद्दे को एक बड़ी पीठ को भेजा जाना चाहिए क्योंकि यह भ्रम से बचने और विधि की स्थिरता बनाए रखने के लिए वांछनीय है। हमारे विचार में, संबंधित पक्षों द्वारा उद्धृत उपरोक्त निर्णय परस्पर विरोधी हैं, हालांकि, किसी भी और भ्रम से बचने और स्थिरता बनाए रखने के लिए, हम निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर देने के लिए इस मुद्दे को बड़ी पीठ द्वारा निर्णय के लिए भेजना उचित समझते हैं:

(1) क्या जी. सागर सूरी (सुप्रा) और कोल्ला वीरा राघव राव (सुप्रा) के मामले में फैसले का अनुपात सही विधि निर्धारित करता है? या

संगीताबेन महेंद्रभाई पटेल (सुप्रा) के मामले में लिया गया दृष्टिकोण जो निम्नानुसार है: मेसर्स वी.एस. रेड्डी (सुप्रा) जो बाद में और परस्पर विरोधी है, विधि के सही प्रास्थिति को निर्धारित करता है?

(2) क्या इसी तरह के आरोपों के आधार पर आरोपी पर अपराध के अंतर्गत मुकदमा चलाया जा सकता है? एन0आई0 अधिनियम जो विशेष अधिनियमन है और इसके अंतर्गत अपराधों के लिए भी आई0पी0सी0 पूर्व दोषसिद्धि या दोषमुक्ति होने से अप्रभावित और, धारा 300 (1) सी0आर0पी0सी0 इस तरह के परीक्षण के लिए आकर्षित करेगा?

14. इस न्यायालय की राय में, इसके पीछे कारण है। यदि इस अनुरूपता को स्वीकार कर लिया जाता है तो पश्चातवर्तीतर में किसी भी व्यक्ति के लिए निगोशिएबल इंस्ट्रूमेंट्स एक्ट की धारा 138 के अंतर्गत कार्यवाही संस्थित किये जाने का लाभ उठाना बहुत सुविधाजनक होगा, , यह तर्क देने के लिए, कि परक्राम्य लिखित अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत कार्यवाही, पश्चातवर्ती कार्यवाही, और तथ्यों के अंतर्गत अपराध का संज्ञान लेगा, जिस पर आपराधिक कार्यवाही लंबित होने के कारण विचार नहीं किया जा सका।

15. अपने आदेश के उचित सम्मान के साथ मैं एक अलग राय रखता हूं, , कि कार्यवाही तय करने के प्रयोजनों के लिए हमेशा किसी कार्य का आशय ही माना जाना चाहिए। तथ्यों का एक समान समूह, जब इसमें अपराध करने में किसी व्यक्ति की संलिप्तता के दो दृष्टिकोणों पर विचार शामिल होता है, जिसमें आपराधिक विधि या अपराध के अंतर्गत परिवाद के एक अधिनियम पर विचार करना शामिल है, जिसमें चेक के अनादर के कार्य पर विचार करना शामिल है, वे एक-दूसरे से बिल्कुल अलग होंगे और सीआरपीसी की धारा 300 के तह त निहित प्रावधानों को आकर्षित करने के लिए, वे कार्यवाही को अतिव्यापी नहीं करेंगे।सीआरपीसी की धारा 300 के अंतर्गत निहित प्रावधानों को आकर्षित करने के लिए, बल्कि, इस न्यायालय का दृष्टिकोण है, कि जैसे ही चेक जारी किया गया था, जो अनादरित किया गया था, जिसने प्रतिवादी को परक्राम्य लिखित अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत कार्यवाही शुरू करने के लिए मजबूर किया, वह स्वयं आवेदक द्वारा तैयार की गई आपराधिक कार्यवाही का समर्थन करेगा, क्योंकि चेक जारी करना एफआईआर में लगाए गए आरोपों के समूह की स्वीकृति होगी।

16. इसके अलावा, प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने एक और फैसले का हवाला दिया था। **2012 (7) एससीसी 621, *संगीताबेन महेंद्रभाई पटेल बनाम गुजरात राज्य और अन्य,*** और अनुच्छेद 20 (2) के संदर्भ में दोहरे खतरे के पहलू पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सीआरपीसी की धारा 300 के अंतर्गत निहित प्रावधानों के प्रकाश में विचार किया गया था, जिसे सामान्य खंड अधिनियम की धारा 26 के साथ पढ़ा जाना था।

17. माननीय उच्चतम न्यायालय ने संगीताबेन महेन्द्रभाई पटेल (सुप्रा) के उक्त निर्णय के पैरा 37, 38 और 39 में एक अलग दृष्टिकोण अपनाया है, कि **धारा 420 के अंतर्गत कार्यवाही शुरू करने की रोक केवल तभी आकर्षित की जा सकती है जब एनआई अधिनियम की धारा 138 के अंतर्गत दोषसिद्धि हो,** अत: यह मामला तथ्यात्मक रूप से अलग होने के कारण, संगीताबेन पटेल (सुप्रा) के उक्त निर्णय में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांतों के प्रकाश में, आवेदक के विद्वान अधिवक्ता का तर्क इस न्यायालय को स्वीकार्य नहीं है। संगीताबेन के उक्त फैसले के प्रतिपादक पैरा 37, 38 और 39 निम्न प्रकाश दिए गए हैं

"37. नि:सन्देपह ही अपीलकर्ता पर धारा 138 एनआई के प्रावधानों के अंतर्गत दंडनीय अपराधों के लिए पूर्व से ही विचारण किया गया तथा मामला उच्च न्यायालय के समक्ष विचाराधीन है। प्रस्तुत मामले में, वह धारा 114 आई0पी०सी० सपठित धारा 406/420

आई0पी०सी० में सम्मिलित है। धारा 138 एन. आई. अधिनियम के अभियोग में, चेक जारी करते समय मनःस्थिति यानी धोखाधड़ी या बेईमान इरादे को साबित करने की आवश्यकता नहीं है। हालाँकि, यहा लिप्ता आईपीसी के अंतर्गत मामले में आपराधिक मनःस्थिति का मुद्दा सुसंगत हो सकता है। आईपीसी की धारा 420 के तहत दंडनीय अपराध गंभीर है क्योंकि इसमें 7 साल की सजा हो सकती है।

38. एन. आई. अधिनियम, के अन्तार्गत मामले में यह विधिक धारणा है कि चेक पूर्ववर्ती दायित्व के निर्वहन के लिए जारी किया गया था और उसको केवल उस व्यक्ति द्वारा खारिज किया जा सकता है जो चेक प्राप्त करता है। इस तरह की आवश्यकता भारतीय दंड संहिता के अपराधों में नहीं है। एन. आई. अधिनियम के अन्त र्गतमामले में यदि जुर्माना लगाया जाता है, तो इसे विधिक रूप से लागू करने योग्य दायित्व को पूरा करने के लिए समायोजित किया जाना है।भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत अपराधों में इस तरह की आवश्यकता नहीं हो सकती है I एन. आई. अधिनियम के अन्तअर्गतमामलों को केवल परिवाद दर्ज करके आरम्भि किया जा सकता है। हालांकि, आईपीसी के तहत किसी मामले में ऐसी शर्त आवश्यक नहीं है।

29. दोनों मामलों के तथ्य अतिव्यापी हो सकते है लेकिन अपराधों के तत्व पूरी तरह से अलग हैं। इस प्रकार, पश्चातवर्ती मामले को उपरोक्त वैधानिक प्रावधानों में से किसी द्वारा प्रतिबंधित नहीं किया गया है।

17. अतः धारा 482 के आवेदन में गुणागुण का अभाव है और इसे तदनुसार खारिज कर दिया जाता है।

(न्यायमूर्ति माननीय शरद कुमार शर्मा,)

06.12.2022